गुलाब

और उसके काँटे

कमलेश पटेल

प्रिय मित्रों,

हम तीन महत्त्वपूर्ण पलों के संगम पर एकत्रित हुए हैं : हमारे पूजनीय आदि-गुरु, फ़तेहगढ़ के श्री रामचन्द्र (लालाजी महाराज) का 147वाँ जन्मोत्सव; उनके नाम पर स्थापित - श्री रामचन्द्र मिशन, इस महान आध्यात्मिक संस्था की वर्षगाँठ; और कान्हा शान्तिवनम् के ध्यान कक्ष का उद्घाटन।

लालाजी के अवतरण से ही, प्रकृति ने हमारे बीच जीवन्त मालिक की निरन्तर उपस्थिति को सुनिश्चित किया है। जिस तरह कोई इंसान गुलाब की सुंदरता को दूर से ही सराह सकता है, उसी तरह मालिक से दूर रहकर भी एक योग्य शिष्य उनके अस्तित्व का सुख लेते हुए उससे आनन्दित हो पाता है। फिर भी फूल की ख़ुशबू सूँघने के लिये, आपको उसके पास जाना पड़ता है। आपको उसे अपने हाथों में पकड़ना पड़ता है। आप जहाँ भी जायें मालिक को पा सकते हैं, लेकिन तब भी कुछ ऐसा महत्त्वपूर्ण है जो बाकी रहता है। एक निश्चित समय पर, आपको उनके पास होना चाहिये। लेकिन, इस गुलाब को पकड़ते समय सावधान रहें! उसमें काँटे होते हैं जो आपको चुभ सकते हैं। मालिक की शारीरिक उपस्थिति में जितने अवसर समाये होते हैं, उसमें उतने ही जोखिम भी होते हैं। यदि इनका सामना तहे दिल से किया जाये, तो ये जाखिम और भी महान आशीर्वाद में परिवर्तित हो सकते हैं, लेकिन ऐसी परिस्थितियों में यदि आपका दिल पिघले ही नहीं, तब वे आपकी अपनी आध्यात्मिक बरबादी को सुनिश्चित करने वाले बन सकते हैं।

बाबूजी महाराज ने एक बार ग़ौर किया कि लालाजी के समय में लोग उनके पास उच्चतर आदर्शों की खोज में आते थे, जबकि उनके अपने समय में लोग सिर्फ़ मन की शान्ति के लिये आते थे। ऐसा दशकों पहले था, और जैसे-जैसे वक़्त ने बदलना जारी रखा,

वैसे-वैसे नीचे की ओर उनकी अधोगति भी जारी रही। आज, आमतौर पर लोग मालिक के पास सांसारिक क्षेत्र, जीवन के भौतिक क्षेत्र में मार्गदर्शन के लिये जाते हैं। असंख्य सांसारिक समस्याओं से बोझिल होने के कारण उनके तर्क ऐसे होते हैं, ''यदि मालिक समस्या-सुलझाने वाले व्यक्ति नहीं हैं तो किसी को ऐसे मालिक की क्यों ज़रूरत होगी? यदि मुझे वह न मिले जो मुझे चाहिये, तो उनके पास क्यों जाना!'' अकसर वे लोग ख़ास दिनों पर आशीर्वाद के लिये आते हैं, जैसे कि सालगिरह, जन्मदिन, शादी, गृह-प्रवेश, या नई नौकरी या व्यापार की शुरुआत, या फलाँ-फलाँ इंसान की शिकायत करने। मालिक से ''इसके लिये और उसके लिये'' याचना करने का क्या परिणाम होता है? किसी तरह के निश्चित आशीर्वाद को माँगने पर, यह ''माँग करना'' ही अपने आप में एक बाधा बन जाती है। चाहे आप भौतिक आशीर्वाद माँगें या आध्यात्मिक प्रगति, अपेक्षा का यह मनोभाव एक बाँध बन जाता है जो आपके दिलों के बीच किसी भी प्रवाह को रोकता है। मालिक इससे भी महान आशीर्वाद देने के लिये तैयार होते हैं, लेकिन अपनी अल्पमति में लोग अकसर ऐसी तुच्छ माँग करके, ख़ुद को भरमा लेते हैं - जैसे कि जन्मदिन का आशीर्वाद!

असली आशीर्वाद क्या होता है? *वह जो जीवन की उस पहेली को सुलझाता है, जिससे कि जीवन का उद्देश्य पूरा होता है।* एक बार अपने जीवनकाल में ऐसा आशीर्वाद पा लेने के बाद, क्या किसी और आशीर्वाद की ज़रूरत होगी? इसीलिये पूज्य बाबूजी महाराज ने ज़ोर देकर कहा कि अपने जीवनकाल में आपको अपने मालिक से सिर्फ़ एक ही बार मिलने की ज़रूरत है; उसके बाद की कोई भी मुलाकात एक बोनस स्वरूप होगी। इसलिये उस एकमात्र मुलाकात के दौरान जो हमारा मनोभाव होता है उस पर बहुत कुछ निर्भर करता है।

असली आशीर्वाद क्या होता है?
वह जो जीवन की उस पहेली को सुलझाता है, जिससे कि जीवन का उद्देश्य पूरा होता है।

ऐसा अधिकतर दुलर्भ ही होता है कि कोई इंसान किसी भी चीज़ की माँग किये बिना, बस प्रेम की खातिर प्रेम करने मालिक के पास आता हो। इस तरह का गरिमापूर्ण दृष्टिकोण सच में उस निष्काम कर्म का उदाहरण है जिसकी भगवान श्रीकृष्ण ने भूरी-भूरी प्रशंसा की है। ऐसे प्रेमपूर्ण और इच्छारहित हृदय में, मालिक चुपचाप, बिना किसी आमंत्रण के ख़ुद को आने से रोक नहीं सकते। मालिक और शिष्य के बीच आत्मीयता की एक अवस्था होती है, जिसमें दोनों हृदय - यानी ग्रहण करने वाला और संप्रेषित करने वाला हृदय - एक-दूसरे को पूरी तरह समझते हैं। उनका तालमेल अपने आप ही बैठ जाता है, और समझाने, उचित ठहराने या पुष्टि देने की ज़रूरत के बिना, दोनों ही जादुई ऊर्जा और नितान्त मौन में स्पन्दित होना शुरू कर देते हैं। हालाँकि, यदि जिज्ञासु का हृदय हर समय, साल-दर-साल कभी न खत्म होने वाली इच्छाओं से भरा रहता है, तो यह विशुद्ध तालमेल निश्चित रूप से स्थगित हो जायेगा। ऐसा कुछ जिसे पलक झपकते ही हो जाना चाहिये था, अब उसमें न जाने कितने ही जीवनकाल लग सकते हैं।

जब एक शिष्य प्रत्याहार को समझ कर, उसका अभ्यास करके पूर्णतया प्रत्याहार में बना रहता है तब मालिक उसके जीवन के केन्द्र बिन्दु बन जाते हैं। अब, मालिक के दिव्य गुणों की अनुभूति करके शिष्य को मालिक के भौतिक अस्तित्व के करीब आने की प्रेरणा मिलती है। यह प्रेरणा भीतर से आनी चाहिये। दुर्भाग्यवश, जब लोगों को आरम्भ में ही मालिक के समक्ष खड़ा कर दिया जाता है, जैसा कि नये जिज्ञासु और गणमान्य लोगों के साथ होता है, तब परेशानियाँ खड़ी हो जाती हैं। जब तक कि किसी व्यक्ति को इस

पद्धति और उसके अभ्यास की कुछ समझ या अनुभव नहीं होता, तब तक मालिक से हुई मुलाकात के समय जो उन्हें मिलता है उसे सराहना उनके लिये शायद मुश्किल हो।

ऐसा अधिकतर दुलर्भ ही होता है कि कोई इंसान किसी भी चीज़ की माँग के बिना, बस प्रेम की खातिर प्रेम करने मालिक के पास आता है। इस तरह का गरिमापूर्ण दृष्टिकोण सच में उस निष्काम कर्म का उदाहरण है जिसकी भगवान श्रीकृष्ण ने भूरी-भूरी प्रशंसा की है। ऐसे प्रेमपूर्ण और इच्छारहित हृदय में, मालिक चुपचाप बिना किसी आमंत्रण के ख़ुद को आने से रोक नहीं सकते। मालिक और शिष्य के बीच आत्मीयता की एक अवस्था होती है, जिसमें दोनों हृदय - यानी ग्रहण करने वाला और संप्रेषित करने वाला हृदय - एक-दूसरे को पूरी तरह समझते हैं। उनका तालमेल अपने आप ही बैठ जाता है, और समझाने, उचित ठहराने या पुष्टि देने की ज़रूरत के बिना, दोनों ही जादुई ऊर्जा और नितान्त मौन में स्पन्दित होना शुरू कर देते हैं।

जब हम मालिक के समक्ष अपने छोटे बच्चों को लाते हैं जिन्हें उस गहन क्षण की समझ ही नहीं होती, तब हमें अधिक सावधानी बरतनी चाहिये। उन्हें वहाँ जबरन लाने में कोई अर्थ नहीं है। जब वे रात को उनींदा महसूस करते हैं और आप उन्हें एक आरामदायक शयनकक्ष में नहीं ले जाते या आप उन्हें नीचे बैठने को कहते हैं जबकि वे इसके आदी नहीं होते, या आप प्रसाद के नाम पर उन्हें वह सब खाने को मजबूर करते हैं जो आश्रम में भोजन के रूप में परोसा जाता है, तब वे विरोध कर सकते हैं और इन परिस्थितियों से नफ़रत करना शुरू कर देते हैं। मालिक के आश्रम में ऐसी कई असुखद स्थितियों का सामना करने के कारण उनमें विरोध बढ़ता जाता है। ऐसी कुंठित भावनाएँ उनके अवचेतन मन में घर कर लेती हैं और ये भावनाएँ बाद के जीवन में मालिक और उन बच्चों के बीच एक दीवार खड़ी कर देती हैं।

मालिक को गहन भाव से मिलना कितना अच्छा होता है! यहाँ तक कि एक निष्ठावान अभ्यासी मालिक से मिलने के लिये जब अपने घर से निकलता है, उसका आन्तरिक भाव प्रेम से भरी प्रत्याशा, आदर और मधुर आश्चर्यों का होता है। मालिक के सान्निध्य में आने पर, उनके कमरे में जाते समय वे बड़े विनीत भाव से जाते हैं। उनकी आँखें शिष्टता से नीचे उस ज़मीन की ओर देखती हैं - जिस पावन भूमि को एक प्रार्थनामय हृदय से देखना चाहिये। वे इतने हल्के और सौम्यता से क़दम बढ़ाते हैं कि वे अपने शरीर के पूरे वज़न को भी उस ज़मीन पर नहीं डालते। ऐसे सच्चे शिष्य आगे का कोई स्थान या आराम से बैठ सकें ऐसी जगह की तलाश नहीं करते। वे लोग मालिक के समक्ष स्वाभाविक रूप से अपने सारे विचार, इच्छाएँ और राय छोड़ देते हैं। यदि वे मालिक की ख़ुशी के अनुसार सचमुच तैयार होना चाहते हैं, तो कम से कम कुछ देर के लिये ऐसा हो जाना चाहिये।

हर चीज़ के बारे में लगातार विश्लेषण करने और निष्कर्ष निकालने से हम मालिक के कार्य को अवरुद्ध कर देते हैं। मालिक के समक्ष, वैयक्तिकता को समाप्त हो जाना चाहिये, और यदि फिर भी वह बनी रहे तो एक सच्चा शिष्य कम से कम आदरयुक्त मौन बनाये रखता है। एक शिष्य को मालिक के हर कार्य का विश्लेषण करना शोभा नहीं देता। एक सच्चा संवाद होने के लिये - एक

सच्ची आत्मीयता को शुरू होने के लिये पूर्णतया आन्तरिक मौन की आवश्यकता होती है। मालिक के पूर्ण व्यक्तित्व का मान रखते हुए खोजती आँखें, सवाल करने वाले मन और तड़पते दिलों को पीछे हटना होगा। अपनी आन्तरिक दशा को उनके साथ लयबद्ध होता महसूस करने की कोशिश करें।

एक बार जब आप मालिक के निकट सान्निध्य में होते हैं, अकसर एक अलग तरह की परेशानी खड़ी हो जाती है। आगे चलकर यह परेशानी या तो आशीर्वाद स्वरूप बन सकती है या घातक सिद्ध हो सकती है। हमेशा की तरह यह भी शिष्य पर निर्भर करता है। अब शिष्य को मालिक की स्वभावगत विलक्षणता या निरालापन दिखने लगते हैं, जिन मालिक को वह पहले दिव्य के रूप में मानता था अब वह उनकी स्पष्ट नगण्यता पर चिन्तन करके, इन सभी ख़ासियतों को आँकने लगता है। जैसा कि बाबूजी महाराज ने एक बार कहा था, ''कई लोग मुझे देखने आते हैं, लेकिन वास्तव में मुझे कोई नहीं देखता!'' आमतौर पर, हम सिर्फ़ वही देखते हैं जिसे हम अपनी चेतना के स्तर से और हमारी समझ से ग्रहण कर सकते हैं। किसी के लिये अपनी चेतना के स्तर द्वारा निर्धारित निम्न दृष्टिकोण से, उच्चतर आयामों को देखना कठिन होता है। हम जो देखते हैं वह और कुछ नहीं बल्कि हमारी अपनी चेतना का प्रतिबिम्ब है, और इसीलिये मालिक एक दर्पण के समान बन जाते हैं। हम जो कुछ उनमें देखते हैं वह हमारे मनोभाव, अपेक्षाएँ या यूँ कहें, हमारे संस्कारों पर आधारित होता है। जब तक इन संस्कारों का खेल चलता है, वे निश्चित रूप से संदेह और कुछ स्तर पर असहमति एवं निराशा पैदा करते हैं, जो परिणामस्वरूप अधिकाधिक प्रतिरोध पैदा करता है। तब हम मालिक और अपने बीच में एक दीवार खड़ी करना शुरू कर देते हैं। यदि ऐसा होने से रोका जाये सिर्फ़ तभी मालिक को मालिक मानना सम्भव हो पायेगा। क्या इसे रोका जा सकता है? यह शिष्य पर निर्भर करता है।

यदि आप ऐसे चरण पर पहुँच गये हैं तो कृपया निराश न हों, क्योंकि यह आगे के क्रम-विकास के लिये प्रस्थान का बिन्दु बन सकता है, सिर्फ़ तभी जब आपने मालिक में जो स्वभावगत विलक्षणता देखी है उसे आपने भली-भाँति समझ लिया हो। इन ढुलमुल परिस्थितियों का उपयोग करके देखें कि उन्हें कैसे दिव्यता से भरे तड़पते दिल से बड़ी आसानी से सुलझाया जा सकता है, जो स्वाभाविक रूप से हर उन बारीकियों को समझता है जो कभी उसे मालिक में तर्कपूर्ण रूप से घातक प्रतीत हुई थीं। शिष्य अपने ही हृदय में मालिक के असमान प्रतीत होने वाले पहलुओं को समाहित करने में असफल हो जाने पर अपनी ही आगे की यात्रा में अवरोध बन जाता है। एक समय आता है, जब प्रत्येक शिष्य अपने ही दिल में उसके मालिक को सूली पर चढ़ा देता है। इस चरण को समझ कर और उससे परे चले जाने के बाद, वे आकस्मिक उन्नति करते हैं।

एक सच्चा संवाद होने के लिये - एक सच्ची आत्मीयता को शुरू होने के लिये पूर्णतया आन्तरिक मौन की आवश्यकता होती है। मालिक के पूर्ण व्यक्तित्व का मान रखते हुए खोजती आँखें, सवाल करने वाले मन और तड़पते दिलों को पीछे हटना होगा। अपनी आन्तरिक दशा को उनके साथ लयबद्ध होता महसूस करने की कोशिश करें।

एक ऐसे चरण की कल्पना करें जहाँ एक शिष्य – उस मार्ग में एक पथिक – मालिक में कुछ कमी देख लेने पर अत्यधिक निराशा में दिल खोलकर रोता है, जबकि पहले, वे सभी नये-नये मिले आध्यात्मिक मालिक के पीछे दिवानों की तरह पड़े रहते थे! इस महत्त्वपूर्ण पड़ाव पर, कुछ लोग इस पद्धति को छोड़कर मार्गदर्शक से दूर चले जाते हैं। मालिक के प्रति नाराज़गी के साथ लगातार सोचते रहने पर, उसके परिणामस्वरूप होने वाले नकारात्मक स्पन्दन निश्चित रूप से उन्हें प्रभावित करेंगे। इसके अलावा, न सिर्फ़ मालिक और शिष्य नकारात्मकता के एक भँवर के चक्र में आ जाते हैं, बल्कि इसी तरह से कई अन्य सहयोगी भी प्रभावित होते हैं। जिस तरह प्रेम के स्पन्दनों का तरंगीय प्रभाव होता है ठीक उसी तरह नफ़रत के स्पन्दनों का भी होता है। इन सारी परिस्थितियों के बावजूद, उदार और दयालु मालिक सभी को अपनाते हैं। वे सभी की बात मानते हैं और हमेशा बेबस रहते हैं। अपनी निजी शान्ति के लिये उनकी चाह कबकी मर चुकी है। शिष्य के दिलों में होने वाले अपने व्यक्तिगत दमन की वे परवाह नहीं करते। चाहे जो भी हो जाये, प्रेम में कोई शर्तें लागू नहीं होतीं!

इन ढुलमुल परिस्थितियों का उपयोग करके देखें कि उन्हें कैसे दिव्यता से भरे तड़पते दिल से बड़ी आसानी से सुलझाया जा सकता है, जो स्वाभाविक रूप से हर उन बारीकियों को समझता है जो कभी उसे मालिक में तर्कपूर्ण रूप से घातक प्रतीत हुई थीं।

मालिक का दयालु स्वभाव उन्हें ऐसे नकारात्मक स्पन्दनों के प्रभाव से नहीं बचाता जो उन शिष्यों के दिलों से उभरते हैं जिनसे वे प्रेम करते हैं। बेदिली या रुखापन किसी के भी मानसिक या शारीरिक स्वास्थ्य पर असर डाल सकता है यहाँ तक कि मालिक के भी। सच कहा जाये तो, मालिक की उच्च स्तर की संवेदनशीलता के कारण ऐसी बेदिली या रुखापन उनके जीवन में इससे भी बड़ी उथल-पुथल लाता है। सन् 1970 के दशक के अन्त में ऐसा हुआ था, कि बाबूजी एक बार बहन कस्तूरी और कुछ अन्य वरिष्ठ सदस्यों के साथ थे। अचानक से कस्तूरी बहन ने वातावरण में एक बदलाव को महसूस किया – बाबूजी की दशा में एक तरह का पलटाव। उन्होंने देखा कि उनकी चेतना अपनी विस्तारित अवस्था से संकुचित हो गई; अचानक वे उदास हो गये थे। जब बहन कस्तूरी ने बाबूजी से इसका कारण जानना चाहा, तो अनमने मन से उन्होंने बताया कि अमुक केन्द्र के सदस्य गुट बना रहे थे, जिसकी वजह से नकारात्मक और राजनीतिक वातावरण बन रहा था।

शिष्यों के दिलों को आच्छादित करने वाली प्रेम और नफ़रत की दोनों ही अवस्थाओं के साक्षी मालिक होते हैं। जब कोई प्रेम में होता है तब उसमें कुछ स्तर की धृष्टता होती है : उदाहरण के लिये, प्रियतम से मिलने की खातिर किसी भी हद तक जाकर बाधा को पार कर लेना। जब कोई किसी कारण से गुस्सा होता है, और वह मालिक से दूर जाना चाहेगा, तो यह भी एक तरह की धृष्टता है, लेकिन एक अलग दिशा में। सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही भावनात्मक दौर में मालिक शिष्य की धृष्टता के मूक द्रष्टा बने रहते हैं। उनके पास और क्या विकल्प है? वे बस प्रार्थना करके इन्तज़ार करते हैं! शिष्य को भी धीरज रखना होगा। संक्षिप्त में, यह बड़ी संख्या में अभ्यासी रूपी सहायक नदियों का मालिक रूपी ऐसे महासागर में संगम है जो नि:स्वार्थता और प्रेम से लबालब है।

शिष्य द्वारा दर्शाई गई भावनात्मक धृष्टता के कई स्तर देखने के बावजूद, मालिक यह सुनिश्चित करते हैं कि शिष्य का अहंकार काफ़ी हद तक परिशुद्ध हो जाये। इसे हासिल करने के लिये वे अनूठी परिस्थितियाँ बनाते जाते हैं। कामुक आवेग के चंगुल से निकलना शायद अहंकार के चंगुल से निकलने से कहीं ज़्यादा आसान होता है। पहले वाले दृश्य में, कोई इसके नकारात्मक असर के बारे में जानता है, लेकिन अहंकार के उठान के साथ ऐसा नहीं होता है। याद रखें कि आवेग के सिर्फ़ पाँच अवरोध या वृत्त होते हैं जबकि कुल तेइस वृत्तों में से अहंकार के ग्यारह वृत्त होते हैं! शिष्य के अहंकार को परिशुद्ध करते समय मालिक को बहुत सावधानी बरतनी पड़ती है। कभी-कभार, तमाम सावधानियाँ बरतने के बावजूद शिष्य नाराज़ हो जाता है। फिर भी, उसकी नाराज़गी को देखने के बावजूद मालिक को अपना काम जारी रखना होता है। कबीर के शब्दों में मालिक एक कुम्हार की तरह घड़े के आकार (व्यक्तित्व) को बनाये रखने के लिये उसे बाहर से ठोकते हुए भीतर से सम्भाले रहते हैं। इंसान होने के नाते, वे भी इस दर्द को महसूस करते हैं जिसे शिष्य अपने मुश्किल दौर में महसूस करता है।

जैसे-जैसे भक्ति बढ़ती जाती है, मालिक अपनी उपलब्धता को सुगम करते हुए शिष्य को अपने करीब लाते हैं। इस तरह भक्त के जीवन में एक नये युग का उदय होना आरम्भ होता है। उनका आन्तरिक रूपान्तरण तीव्र होता जाता है और वे आध्यात्मिक नशे से आत्मविभोर बने रहते हैं, जो उन्हें असीम कृतज्ञता की अनुभूति की ओर ले जाता है। फिर भी, खतरा बना रहता है। इन रूपान्तरकारी परिस्थितियों के दौरान, शिष्य ख़ुद को दूसरों से श्रेष्ठ समझने लगता है या बाकियों से अधिक महत्त्वपूर्ण। ऐसी परिस्थिति को देखने पर मालिक का दिल लाखों टुकड़ों में चूर-चूर हो जाता है।

कबीर के शब्दों में, मालिक एक कुम्हार की तरह घड़े के आकार (व्यक्तित्व) को बनाये रखने के लिये उसे बाहर से ठोकते हुए भीतर से सम्भाले रहते हैं। इंसान होने के नाते, वे भी इस दर्द को महसूस करते हैं जिसे शिष्य अपने मुश्किल दौर में महसूस करता है।

मालिक के साथ अपनी यात्रा के दौरान, हम हमेशा यही पाते हैं कि एक विकल्प होता है – आकस्मिक उन्नति करने का विकल्प या अपने ही रचे *ब्लैक होल* में धँस जाने का, जिसे मैं ख़ुद पर थोपी गई आध्यात्मिक वक्रता कहना पसन्द करता हूँ। एक बार जब आप अहंकार के भँवर में फँस जाते हैं तो उससे बाहर निकलना मुश्किल होता है। यदि ऐसा हो जाता है और आप इस दुर्भाग्यपूर्ण वक्रता के बारे में अवगत हो जाते हैं, तब ख़ुद का, मालिक और उनकी क्षमताओं का पुनः आकलन करते हुए, एक क़दम पीछे लेकर स्पष्ट हृदय के साथ अपने प्रयासों को फिर से व्यवस्थित करें। आन्तरिक रूप से मालिक का आकलन करने में कोई पाप नहीं है। इस तरह के पल में, आप ऐसा किये बिना अपनी यात्रा में आगे नहीं बढ़ पायेंगे। आख़िरकार, यदि कोई इंसान ख़ुद को पूरी तरह से समर्पित करने की हद तक, अंत तक जाने के लिये तैयार हो, तो "क्या वे मेरी आराधना के योग्य हैं?" ऐसा कहकर मालिक की यह परीक्षा लेना, ज़रूरी होता है। आप जब ऐसा करते हैं तो इसमें मालिक का कोई अपमान नहीं होता है। जब एक दिल पूरी तरह से संतुष्ट होता है, सिर्फ़ तभी कोई इंसान वैयक्तिकता की सभी सुरक्षात्मक बाधाओं को छोड़ देता है। प्रेम में, सभी बाधाएँ बस मिट जाती हैं। यह

सुरक्षात्मक प्रक्रिया सिर्फ़ दुश्मनों या उन लोगों के लिये बरकरार रहती है जिन्हें हम नापसन्द करते हैं। बाधाएँ मिट गई हैं और लिहाज़ा हिम्मत पैदा हो गई है, अब वह बूँद सागर में समाने के लिये तैयार है।

मालिक के साथ अपनी यात्रा के दौरान, हम हमेशा यही पाते हैं कि एक विकल्प होता है – आकस्मिक उन्नति करने का विकल्प या अपने ही रचे ब्लैक होल में धँस जाने का, जिसे मैं ख़ुद पर थोपी गई आध्यात्मिक वक्रता कहना पसन्द करता हूँ।

दुर्भाग्यवश, अधिकांश लोगों को मालिक के सम्बन्ध में अपनी ग़लतफ़हमियों को दूर करने में समय लगता है, जिसमें बड़ी मात्रा में उनकी भावनात्मक ऊर्जा खर्च हो जाती है। इस बुरे समय के दौरान व्यक्ति अस्थिर और उद्देश्यरहित बना रहता है। यहाँ तक कि इस सम्भाव्य दौर में, मालिक भी बेचैन रहते हैं। वे शिष्य के साथ संवेदना रखते हैं और उसकी भलाई एवं स्थिरता की चिन्ताओं से बोझिल रहते हैं। शिष्य की सुरक्षित यात्रा को सुनिश्चित करने के लिये, अब मालिक को अपने काम में तेज़ी लानी होगी। इस नाज़ुक दौर में, वे शिष्य में किसी भी वक्रता को आने नहीं दे सकते हैं।

हर दृश्य में, यह आत्म-महत्त्व ही है जो मुख्य दोषी बना रहता है और वह हमें आध्यात्मिक जड़ता के समय-पाश में बाँधे रखता है। अहंकार अपना फन उठाता रहता है! मालिक द्वारा लागू किये गये सुझाव और सुधारात्मक क़दम हमारे दिलों को गहराई से ठेस पहुँचा सकते हैं। दुर्भाग्यवश, अहंकार के असीमित फन होते हैं; जब एक को नष्ट किया जाता है, तब देखो दूसरा अपना फन उठाने को तैयार रहता है! यही खेल अनंतकल तक चलता रहता है, जब तक कि एक दिन हम इस खेल की निरर्थकता को समझकर, प्रेम के साथ हमेशा के लिये समर्पण नहीं कर देते। अब हम उस असली घर में पहुँच चुके हैं। हमें अब कितनी देर इंतज़ार करना होगा? आइये, इस बात को समझें कि एक-दूसरे के साथ हम जो वक़्त बिताते हैं उसकी एक सीमा होती है। हमारे पास अनंतकाल तक का समय नहीं होता है! एक बार जब दिल हर तरह से आश्वस्त हो जाता है, तब यह जान लें कि ख़ुद को पूरी तरह से समर्पित करने का समय हो गया है।

प्रेम और आदरसहित,

कमलेश पटेल

CELEBRATING 75 YEARS
SHRI RAM CHANDRA MISSION

तीन महत्त्वपूर्ण पलों को मनाना :

हमारे पूजनीय आदि-गुरु,

फ़तेहगढ़ के श्री रामचन्द्र (लालाजी महाराज) का 147वाँ जन्मोत्सव;

उनके नाम पर स्थापित - श्री रामचन्द्र मिशन,

इस महान आध्यात्मिक संस्था की वर्षगाँठ;

और कान्हा शान्तिवनम् के ध्यान कक्ष का उद्घाटन।

कान्हा शान्तिवनम्, हैदराबाद.

heartfulness
purity weaves destiny